आपातकाल में सृजन फुलवारी

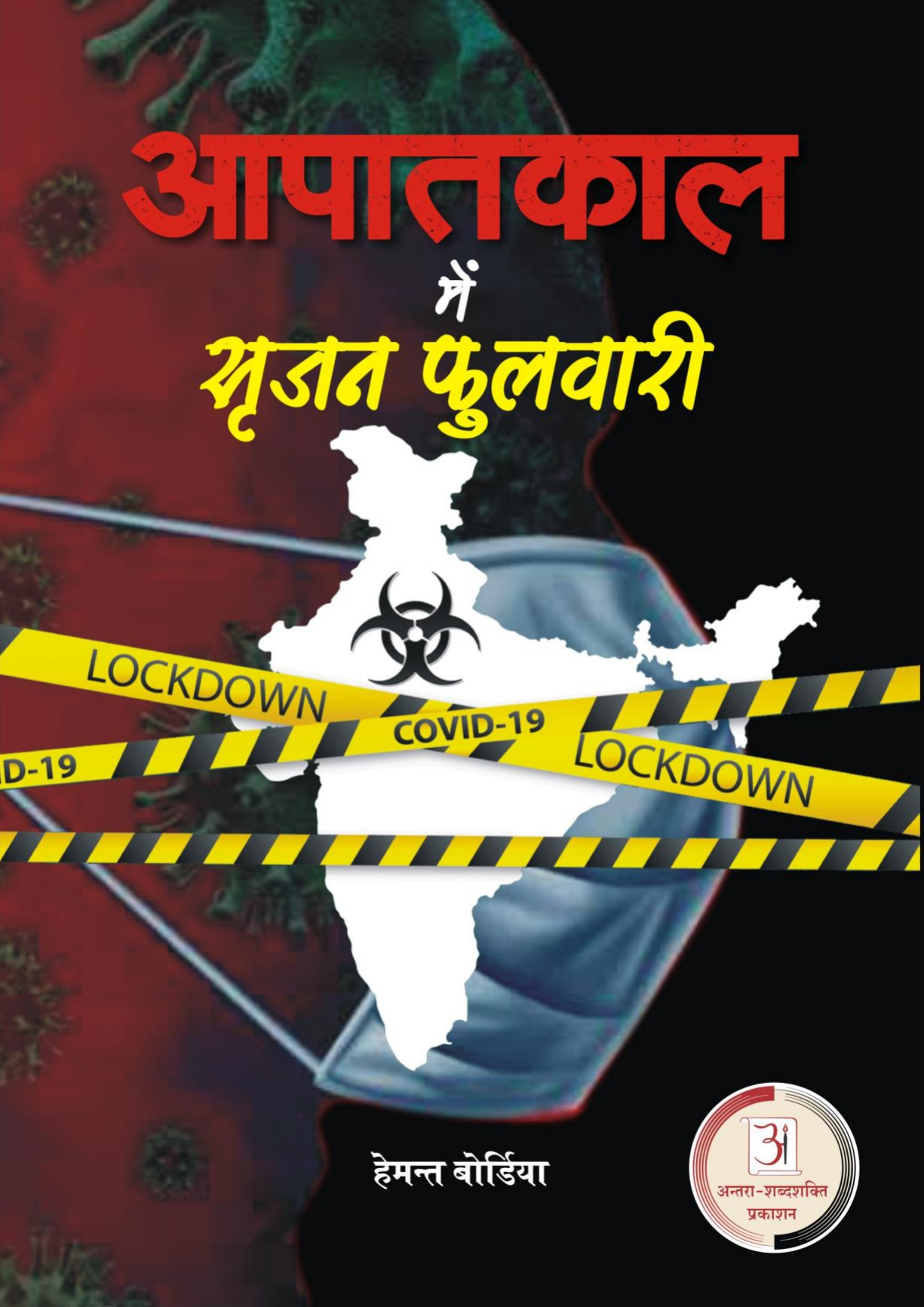

हेमन्त बोर्डिया

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

आपातकाल में सृजन फुलवारी

हेमन्त बोर्डिया

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-133-6
संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159
मोबाईल- 9424765259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020 **हेमन्त बोर्डिया**
मूल्य- 50.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY HEMANT BORDIYA

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुज़र रहा है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (covid19) जैसी महामारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महामारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज़ दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय 'समकित सुराना' से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हामी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय 'संदीप सोनी' ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111 किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सज़ा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज़ सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

अनुक्रमणिका

1.	शुक्र है कि.. फाँसी हुई!	6
2.	काश!	7
3.	बस अब और नहीं..!	8
4.	रणचंडी	9
5.	अपने भीतर	10
6.	मजदूर	11
7.	भीड़	12
8.	आसान नहीं होता	13
9.	बेटी	14
10.	परिंदे	15
11.	हारा नहीं मगर	16
12.	असर	17
13.	बदलती हुई औरत	18
14.	शाम	19
15.	कोई गौरैया नहीं आती	20
16.	जब भी लिखना	21

शुक्र है कि.., फाँसी हुई..!

अंततः फाँसी हुई उस घिनौने कुकर्म को...
जिसने रख दी थी उधेड़ कर
कपडों और शरीर से लेकर आत्मा तक ..
एक निर्भया की ही नहीं पूरे स्त्री वर्ग की..
पूरे हिंदुस्तान की..!

शुक्र है कि.. फाँसी हुई.. उस घिनौने कुकर्म को..
जिसने पुरुषत्व का शीश शर्म से झुका दिया..
जिसने अकल्पनीय रूप से बढ़ा दी,
मानसिकता के विकृत हो जाने की सीमाएँ..
जिस दानवता ने दे दी चुनौती
पूरे समाज कोबड़ी सहजता से...
शुक्र है कि उसे फाँसी हुई..!!

किन्तु फिक्र है कि
फाँसी पर चढ़ते चढ़ते.. बढ़ा गया वो
सम्बल ..भविष्य की गर्त में
छुपे हुए अपराधियों का..
यह बताकर कर कि
सारे जघन्य अपराध सिद्ध होने के बाद भी..
वो लड़ सकते हैं अदालतों में..
वो रह सकते हैं ज़िंदा.. कम से कम सात वर्षों तक..

शुक्र करें..या फिक्र करें.. कि फाँसी हुई...!

काश!

फैल जाते हैं
कितनी आसानी से
इस हाथ से उस हाथ..

करते हैं यात्रा
बड़ी ही शीघ्रता से
इस शरीर से उस शरीर
बिना समय गवाए..

सदा अवसर की प्रतीक्षा में
ये संक्रमण वाले रोग
तत्पर रहते हैं..
पसर जाने के लिए
इस जगह से उस जगह..

काश! कि
ये मुहब्बत भी
फैलती मन से मन तक
हाथ मिलाने भर से ...!

बस अब और नहीं..!

मैं नहीं बनना चाहती हूबहू तुम जैसा..
मैं नहीं होना चाहती तुम्हारी परछाई..
न ही तुम्हारा प्रतिरूप ...
मैं नहीं चाहती दोहराना इतिहास..
जिसने तुम्हे रखा था अब तक..किसी न किसी बहाने
बनाकर अपने हाथों की कठपुतली...

कभी बन्द कर दिया बनाकर देवी मंदिर में
ताकि तुम्हारी हदें तय हो जाए..बिना तुम्हारे विरोध के..
तुम विराजित रही मन्दिर में
और तुम्हे पूजने वाले.. करते रहे बाहर.. अपनी मनमानियाँ..

कभी बना दिया गया तुम्हे पर्दे के भीतर की हूर..
कह कर कि तुम बहुत बेशकीमती हो.. बाहर तुम्हे ख़तरा है..
कभी देवदासी.. कभी पाँव की जूती भी ..
कभी अपना पक्ष रखने के लिये
तुम्हारी तेज होती आवाज को दबा दिया गया...
थप्पड़ के प्रहार से...

तुम ऐसी मजदूर हो जिसे मज़दूरी के लिये रखने वाले ने..
तुम्हारे पिता से लिये मन माफ़िक दाम..
सोना...चांदी.. जेवरात..
कभी जलाई गई.. कभी फेंका गया तुम पर तेज़ाब
तुम्हारी ना कहने की हिम्मत के कारण..!
माँ मैं नहीं बनना चाहती तुम्हारी परछाई.. तुम्हारा प्रतिरूप..
मैं बनना चाहती हूं
तुमसे परावर्तित होने वाली किरणों से बना ज्योतिपुंज...
मैं बनना चाहती हूं
तुम्हारी उम्र भर की तपस्या का वरदान..
मैं नहीं दोहराने दूँगी इतिहास..
बस अब और नहीं..!!

रणचंडी

गर उन्हें रखना पड़ जाए
चाकू-छुरी या नुकीला कोई हथियार
जो आ जाए काम वक़्त पड़े..

गर जरूरत पड़े उन्हें रहने की ख़बरदार..
हर घड़ी..गुज़रते हुए
जाने पहचाने रास्तों से भी..

गर उन्हें सीखना पड़े दाँव-पेंच..
ताकि दे सके
पटकनी किसी भी ख़तरे को..

गर नज़ाकत छोड़ बनना पड़े उन्हें
इतना मजबूत कि सरपट भाग सके
छुड़ा कर खुद को किसी की जबरन पकड़ से..

गर ओढ़ कर रखना पड़े उन्हें
चेहरे पर खूंखार हाव भाव..
गर उन्हें कम पड़ने लगे अपने दो हाथ..

उन्हें महसूस हो कि
वो सिर्फ़ दो हाथों से महफ़ूज़ नहीं है ..
दरकार हो उन्हें अष्टभुजाधारी हो जाने की..,

जब अपनी दरकार के चलते
औरतें कोशिश करें रणचंडी बनने की..
तब हमें समझ लेना चाहिये

कि
आदमी,..महिषासुर बन चुका है।
आदमी,.. दानव हो चुका है...!!

अपने भीतर

जलना भी दरकार है
भड़कने का डर भी...
हवा ही से हैं वज़ूद
हवा ही से है डर भी..

जितने बचे हैं
उतने भी जल जाएँ..
कतरा कतरा
इस मिट्टी में ढल जाएँ...

अधूरे पड़े
किसी काम की तरह..
आधे तय किये
मक़ाम की तरह..

आधी मियाद ख़त्म कर चुके,
हम इम्तिहान में ..
आधा खींचा
हुआ तीर हम, कमान में...

अपनी कमाई के खाते में
कुछ बदसलुकियाँ हैं
कुछ अख़लाक भी हैं..

उम्र के इस दौर में
अपने भीतर
कुछ आग भी है
बहुत कुछ ख़ाक भी हैं..!

मजदूर

पसीने से लथ पथ.. मैले कुचैले कपड़े..
जगह-जगह गुदड़ी सीने के मोटे धागे से की गई तुरपाई...
उलझे हुए बालों पर धूल की परत..
सूखी हुई ज़मीन की तरह.. फ़टी हुई एड़ियाँ..
बता रही है..सूखा किस कदर हावी है..
एक अरसे से नहीं बरसी है सुकून की बारिश..
कुल मिला कर हालत ऐसी
इंसान नहीं लगता इंसान..
सर पर रखे सामान का
दिल में थामे बोझ ज़िन्दगी का..
जब वो मज़दूर
मुस्कुराता है... तो बढ़ जाता है
यह यकीन की खुशी का अभावों या
सुविधाओं से नहीं है कोई लेना देना...
हालांकि मुझे यह भी शक है या
यकीन ही समझें
कि न जाने कब, किस पल
ये मुस्कुराहट कुचल दी जायेगी..
वक्त के पहिये के नीचे...

पाक, सादा, ज़हीन होती है
मुस्कुराहट हसीन होती है
जाने कब हाल बदल दे किस्मत
बड़ी बेदिल मशीन होती है...!

भीड़

हर तरफ़ कर्कश आवाजें
अपने अधिकार छीनती, झपटती भीड़..
अपने फायदों के लिये
कुनबों में बंटता हुआ.. सभ्य समाज..
नाम पर धर्म, जाति, भाषा
आज़ाद अभिव्यक्ति के
हिंदुस्तान की चिन्दी चिन्दी
बाँट लेने को आमादा..
कुछ बुद्धिजीवी,.. कुछ ठेकेदार..
स्वयं को बड़े अभिमान से घोषित करते हुए..
जयचंद या ख़िलजी के प्रवर्तक...
कोई जीत लेने को आतुर
सदियों पहले हारे हुए युद्ध...
कुछ पुरोधा बदलने को तत्पर है.. इन दिनों..इतिहास..
भीड़ करना चाह रही सड़कों पर चुकता हिसाब
कुचल कर अदालतों को..

देश का रथ इन दिनों चढ़ान पर है..
आसमान में चीलें उड़ान पर हैं..
विरासत में मिले हिंदुस्तान को देखती
बच्चों की निगाहें..
कभी ज़मीन पर..
कभी आसमान पर हैं..!

आसान नहीं होता

होना पड़ता है
निष्कलंक..., निष्पाप.., निर्लोभ..!

करना होता है शुद्धिकरण
विचारों का.., व्यवहारों का.., आचरण का..!

होना पड़ता है समर्पित
देश के लिये.., समाज के लिये.., मानव जाति के लिये..!

त्यागना पड़ता है
भोग.., लोभ.., स्वार्थ..!

पोसना होता है
मौन को.., धैर्य को.., सत्य को..!

उठना होता है ऊपर
घृणा से..., क्रोध से.., बैर से..!

यूँ ही आसान नहीं होता
महात्मा बन जाना..
राष्ट्रपिता कहलाना..
गाँधी बनने के लिये
गाँधी होना पड़ता है...!

बेटी

कभी हिस्सा थी
घर भर का
कभी घर भर था
उसके हिस्से में...
अब घर से बिदा हो कर
हटा लेती है अपने साथ
अपने हिस्से से अपना हक भी...
होकर किसी पराये घर की...
थोड़ा सा छोड़ जाती है खुद को...
रोटी के डिब्बे में जान बूझ कर
छोड़ी गई रोटी के टुकड़े सी..
या बटुए में..एक अदने से नोट की तरह
जो खर्च के लिए नहीं होता..
बस रखा रहता है..
ठीक ऐसे ही
मायके से बिदा हो कर,
ससुराल जाने वाली बेटी
छोड़ जाती है
खुद को किसी बरकत की तरह..
बेटी जहाँ भी रहे
थोड़ी सी छूट जाती है मायके में..
बरकत की रोटी की तरह..!

परिंदे

वो आते पलट कर
करते हंगामा हमारी छत पर...
हमारे आँगन में देते धरने...
हराम कर देते हमारा जीना
हमारा सोना..!

दर्ज भी नहीं करवा पाते हम
किसी थाने में रिपोर्ट...
हमारे बाहर निकलते ही
हम पर कर देते हमला..!

वो निहत्थे भी हमें
लहूलहान करने की रखते हैं ताकत..
वो उठा कर कोई जलती लकड़ी..
राख कर देते
हमारे घर, बाजार, इमारतें, मॉल...थिएटर..!

उनके घरों को उजाड़ने का
उनके बसेरो से दरबदर कर देने का
शहरों से बेदखल करने का
करते वो पुरज़ोर विरोध..!

इन परिंदों को आता यदि बदला लेना..
या लड़ना अपने हक़ के लिये..
जीना मुहाल कर देते हमारा..!

हारा नहीं मगर

माना कि परेशान हूँ
हारा नहीं मगर..
टूटा तो हूँ कहीं कहीं
ज्यादा नहीं मगर..!!

मेरी हदों को घेर कर
अड़चन खड़ी हुई
जितना उठा हूँ मैं सदा
उतनी बड़ी हुई
लहरें समन्दरों की ये
माना कि प्रबल हैं..
हाथों में अपने भी तो है
हिम्मत जड़ी हुई...
मुझमें भी उफ़नता है जो
तूफ़ान की तरह..
दरिया वो मुझमें है भरा
खारा नहीं मगर...!!

कुछ स्वप्न पर्वतों से हैं
आकार में बड़े...
आँखें खुली हैं जब मेरी
ये सामने खड़े...
मैं रोज दौड़ता रहा
इनकी दिशाओं में
इक इंच ये हिले नहीं
रहे अटल , अड़े...
अपने भी इरादे इन्हें
पैरों से नापना..
करना तो है सफ़र मुझे,
आधा नहीं मगर...!!

माना कि परेशान हूँ
हारा नहीं मगर..
टूटा तो हूँ कहीं कहीं
ज्यादा नहीं मगर..!!

माना कि परेशान हूँ
हारा नहीं मगर..
टूटा तो हूँ कहीं कहीं
ज्यादा नहीं मगर..!!

असर

वो अक्सर
देखते हैं
समझते हैं..
करते हैं महसूस..
लेकिन कहते नहीं
आड़े आ जाती है
उम्र..अनुभव..और ताकत..!

बच्चे बहुत कुछ
देखते हैं दीवारों,
दरवाजों की
ओट से..
हमारी आदतें,
हमारे व्यवहार..
हमारी गलतियाँ..
हमारी तकरारें..!

उनके ज़ेहन की लड़ाई में
उनकी जीत या हार..
तय करती है
उनका भविष्य..
कसूर या असर... हर बार
गुणसूत्रों का तो नहीं होता..!!

बदलती हुई औरत

जिसे तुम देते आये हो उलाहना..
नाम पर रीतियों..
परम्पराओं.. संस्कारों के.. मर्यादाओं के..,
जिसका समय के साथ बदलना,
तुम्हे सबसे पहले कटु लगा.. असह्य लगा..,
जिसके कपड़ों से तुमने मापा है सदा, कद सभ्यता का..,
तुमने सदा जिसे बना कर रखा
संस्कारों का पतन मापने का मीटर..
जिसके सर पर धरा हुआ है तुमने
परम्पराओं का हद से भारी पोटला..,
जिसे तुम बैठे बैठे आंकते हो..,
हाथ में मसलते हुए खैनी
कभी खींचते हुए बीड़ी का धुँआ..
या लगाते हुए सिगरेट के कश..या
कभी पीकर महँगी शराब..

सुनो,..!!
वो बदलती हुई औरत आज भी जानती है
सलीके से साड़ी पहनना..
बिंदियां लगाना.. और सजा कर रखना
घर और घर की दहलीज को..
तुम्हारे सुसंस्कारित घर का
वह आज भी बनी हुई है तोरणद्वार..!

हालांकि तुम भूल गए हो
धोती में गांठ लगाना भी..!!

शाम

मशक्कत से थके हुओं को...
दिन भर के पके हुओं को..
ठोकरों, टक्करों से मिले
घावों पर मरहम की तरह..
सर्दी से ठिठुरते, कांपतो को
किसी लिहाफ़.. गरम की तरह..
रख दिया हो जैसे रुई का फाहा
कंकर से बेचैन आँख पर..
या पानी की ठंडी फुहार
जैसे तपती हुई राख पर..
टूटे हुए दिलों को जैसे
हासिल मय के प्याले..
या तरसे हुए प्रेमी को
प्रेमिका कर ले,
अपनी बाहों के हवाले...
सहरा के प्यासों को जैसे
मटके का शीतल पानी..
या दिन भर भटके फ़कीर को,
मिल जाए कोई महादानी...
ठीक ऐसे ही शाम ले लेती हैं
अपनी बाहों में दिन की सारी परेशानियों
उलझनों, बेचैनियों से बोझिल आदमी को...!!

शाम हूबहू सुकून देती है
माँ के आँचल की तरह...!!

कोई गौरैया नहीं आती

शीशे चढ़े हुए
खिड़कियों पर,
चढ़ी हुई हैं मच्छर जालीयाँ..
व्यवस्था ऐसी की
रोशन दानों से
रौशनी भी
हमारी जरूरत के
हिसाब से आये..

आधी रात के
सोये हुओं की नींद में
कोई रोशनी विघ्न न डाले..
कोई आवाज़ उठा न दे..
ये व्यवस्था पक्की है
मेरे नये घर में..
मैं जब तक न चाहूँ
कोई रोशनी, कोई आवाज़
नहीं आती..
अब पुश्तैनी घर की तरह..
मुझे जगाने
कोई गौरैया नहीं आती..!!

जब भी लिखना

जो लिखो मुझे
तो यूँ लिखना..
जैसे कोई बच्चा बनाता है
चित्र किसी कागज़ पर..
छुप कर, मुस्कुराकर बड़ी तन्मयता
से..

मुझे लिखना
तो यूँ लिखना जैसे
कोई सखी माँडती है मेहंदी
अपनी दुल्हन सहेली के हाथ में...
सँजोती है साथ अपने सपनों की
बारात..

मुझे लिखना तो
ऐसे जैसे कि शिल्पकार
उकेरता है चट्टानों को काटकर अपनी
कल्पना..
स्वेद बूंदों की देता है आहुति निरंतर..
मौसमों से बेपरवाह...

लिखना हो मुझे तो ऐसे लिखना..
जैसे दूर परदेश में
अपने स्वामी को पाती लिखती है
गौने की प्रतीक्षा में
व्याकुल एक नव यौवना...

या यूँ लिखना जैसे
दिन की धूप से वाष्पित हवा
रात के शीतल नेह के
एवज में दे जाती है
नाजुक पत्तियों को ओस का चुम्बन..

हाँ मुझे लिखना ठीक
ऐसे कि लिख कर बस छुपा देना हो..
बदलें में..बिना किसी उम्मीद,
बिना किसी आशा ..
बिना किसी अपेक्षा के..

मुझे लिखना तो बस इतना याद
रखना
मत लिखना मुझे
किसी मुनीम के हिसाब की तरह..
मूल और सूद के बंधन से
मुक्त रखना मुझे जब भी लिखना...

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

कलम के माध्यम से सृजन का पहला एवं मुख्य स्रोत विचार हैं और अच्छे विचारों के लिए सभ्य वातावरण का मिलना आवश्यक है। मेरे जीवन में भी यह सृजन की यह महती आवश्यकता मेरे माता पिता ने पूरी की। शिक्षा के लिए संघर्ष के गाँव से शहर आकर पिताजी ने अपनी आने वाली संतानों को एक अच्छा परिवेश देने का सपना देखा और पूरा भी किया। शिक्षा के दौरान विद्यालयीन कार्यक्रमों में निबंध लेखन से स्वयं में लेखन गुणों का अंकुरण महसूस किया। महाविद्यालयीन शिक्षा पूर्ण होने तक निबन्धों के अलावा मात्र ४-५ कविताएं और २ एकांकी लिख चुका था।

बाहर निकल कर रोजगारोन्मुखी रास्तों पर रोजगार की तलाश में दौड़ लगाई और उस दौड़ से उड़ती धूल में लेखनशक्ति के अंकुर वहीं कहीं दब गए और वर्षों दबे रहे। संचार तकनीकी में विकास के चलते वाट्सप समूहों के माध्यम से अच्छी रचनाओं के पाठन, संकलन और कहपी पेस्ट के साथ दबे हुए अंकुरों को नमी मिली और प्रस्फुटन के बाद स्वयं के सृजन का पौधा लहलहाने लगा। वरिष्ठ रचनाकारों के स्नेह मार्गदर्शन और प्रोत्साहन के चलते यह पौधा आज आज आपके सामने हैं। विभिन्न पटलों के माध्यम से सृजन शक्ति को उर्वरता मिली और अब अंतरा शब्दशक्ति प्रकाशन से मुक्त कविता संग्रह के साथ प्रकाशन का एक और पुष्प खिलने जा रहा है। आप सभी अपने स्नेहाशिष एवं मार्गदर्शन से इस पौधे को इतना लायक वृक्ष बना दें कि यह स्वयं की छाया में नए साहित्य सृजक पौधों को आश्रय दे सके।

रचनाकार
हेमन्त बोर्डिया
खरगोन (म.प्र.)
Email - thebordia@gmail.com
Mobile - 8357967862

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-133-6
मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/